ISSN: 2393-8048
International Advance Journal of Engineering, Science and Management (IAJESM)
Multidisciplinary, Multilingual, Indexed, Double Blind, Open Access, Peer-Reviewed, Refereed-International Journal.
SJIF Impact Factor =8.152, July-December 2025, Submitted in August 2025

# पंडित दीनदयाल उपाध्याय के राजनीतिक, सामाजिक एवं आर्थिक विचार

प्रो. विनीता पाठक, आचार्य राजनीति विज्ञान विभाग, दीनदयाल उपाध्याय गोरखपुर विश्वविद्यालय, गोरखपुर
दीपक कुमार, शोध छात्र, राजनीति विज्ञान विभाग, दीनदयाल उपाध्याय गोरखपुर विश्वविद्यालय, गोरखपुर

## शोध सार

यह शोध पत्र पंडित दीनदयाल उपाध्याय के राजनीतिक, सामाजिक एवं आर्थिक विचारों का अध्ययन करता है, जिसमें उनके मूलदर्श ''एकात्म मानववाद'' को केंद्रीय स्थान प्राप्त है। उपाध्यायजी ने भारतीय परंपरा, संस्कृति और समाज की जड़ों से जुड़े वैकल्पिक विचार प्रस्तुत किए जो पश्चिमी पूंजीवाद और साम्यवाद से भिन्न थे। राजनीति में उन्होंने सांस्कृतिक राष्ट्रवाद, विकेन्द्रीकरण और सेवा–आधारित लोकतंत्र की आवश्यकता पर बल दिया। सामाजिक दृष्टि में उन्होंने जातिवाद और भेदभाव का विरोध करते हुए समरसता व अंत्योदय का समर्थन किया। आर्थिक विचारों में उन्होंने स्वदेशी, आत्मनिर्भरता और कुटीर उद्योगों को प्राथमिकता देते हुए नैतिकता–समन्वित अर्थनीति का प्रतिपादन किया। यह शोध उपाध्यायजी के विचारों की समकालीन प्रासंगिकता का विश्लेषण करता है और निष्कर्ष प्रस्तुत करता है कि उनका चिंतन आज भी भारतीय नीति–निर्धारण और समाज निर्माण के लिए एक सशक्त आधार प्रदान करता है।

**मुख्य शब्द :–एकात्म मानववाद, सांस्कृतिक राष्ट्रवाद, अन्तोदय, स्वदेशी, आत्मनिर्भरता, विकेन्द्रीकरण, ग्राम स्वराज, धर्मराज्य, भरतीय अर्थनीति, कुटीर एवं लघु उद्योग इत्यादि।**

## भूमिका

भारतीय राजनीतिक चिंतन के आधुनिक शिल्पियों में पंडित दीनदयाल उपाध्याय का नाम अग्रगण्य इसलिए है क्योंकि उन्होंने ''जो वैचारिक शून्यता'' स्वतंत्रता उपरांत भारत में उत्पन्न हुई थी, उसे भारतीय संस्कृति, परंपरा और नैतिकता के आलोक में एक वैचारिक ढांचा प्रदान कर भरने का कार्य किया। उन्होंने भारतीय जनसंघ (जिसका रूप बाद में भारतीय जनता पार्टी के रूप में सामने आया) को केवल एक राजनैतिक दल नहीं रहने दिया, अपितु उसे एक 'चिंतनधारा' का वाहक बनाया। स्वतंत्र भारत पश्चिमी विचारधाराओं की नकल करते हुए स्वयं के स्वाभाविक मार्ग से भटक रहा था। एक ओर पश्चिमी पूंजीवाद का आकर्षण था तो दूसरी ओर समाजवाद के सामूहिक विनियोग का आदर्श। इस द्वंद्व से बाहर निकलने के लिए जिस वैचारिक बल की आवश्यकता थी, उसके रूप में "एकात्म मानववाद" को प्रस्तुत किया गया। दीनदयाल उपाध्याय ने भारतीय समाज की आत्मा को समझने के लिए गहन अध्ययन किया। उनके अनुसार किसी देश की राजनीतिक और आर्थिक नीतियाँ तब तक सफल नहीं हो सकतीं जब तक वे उसके सांस्कृतिक आधार पर आधारित न हों।

**दीनदयाल उपाध्याय ने कहा कि** :–*"भारत का राष्ट्रभाव उसकी संस्कृति में है, न कि केवल भौगोलिक सीमाओं में।"*

यह सांस्कृतिक राष्ट्रवाद उनके चिंतन का मूल है। जब कांग्रेस के नेता 'सेकुलरिज़्म' के नाम पर राष्ट्र की सांस्कृतिक पहचान को खारिज कर रहे थे, तब उपाध्याय ने यह साहसपूर्वक कहा कि "धर्मनिरपेक्षता का अर्थ मूल्यों का त्याग नहीं हो सकता।'' उनकी वैचारिक भूमिका उस मूल प्रश्न से शुरू होती है– भारत की आत्मा क्या है? वे भारतीय समाज को मात्र आर्थिक इकाई नहीं मानते थे। भारत उनके लिए आध्यात्मिक चेतना से युक्त, जीवंत और सहिष्णु परंपरा का संवाहक था।

एकात्म मानववाद' केवल एक विचारधारा नहीं, बल्कि 'जीवन व समाज की समग्र दृष्टि' है। इसका उद्देश्य है, की जीवन के विविध पक्षों में समन्वय स्थापित करते हुए एक ऐसी सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक और आर्थिक व्यवस्था का निर्माण करना जो व्यक्ति, समाज और राष्ट्र सभी के कल्याण की दिशा में अग्रसर हो।

*''हमारा दृष्टिकोण न पाश्चात्य व्यक्तिवाद का है, न साम्यवाद का समष्टिवाद। हमारी मूल अवधारणा 'समत्ववादी' है, जिसमें व्यक्ति और समाज का संतुलन हो।''*

शरीर, मन, बुद्धि और आत्मा – पूर्णता की अवधारणा, एकात्म मानववाद में मनुष्य को चार स्तरों पर समझा गया है:– 'शरीर' – भौतिक आवश्यकताओं की पूर्ति (भोजन, वस्त्र, आवास, आरोग्य), 'मन' – भावनात्मक संतुलन (संबंध, कला, भाषा, संस्कृति), 'बुद्धि' – विचार व विवेक (ज्ञान, तर्क, शिक्षा), 'आत्मा' – आत्मिक संतोष, परमार्थ, नैतिकता हैं। यदि विकास केवल शरीर या मन तक सीमित है तो व्यक्ति विकृत हो जाता है। अतः उपाध्याय कहते हैं कि पूर्ण विकास वही है जिसमें आत्मा की आवश्यकताओं की भी पूर्ति हो, अर्थात संपूर्ण मानववाद। उनकी दृष्टि में "स्वदेशी" केवल अर्थव्यवस्था का प्रश्न नहीं, बल्कि 'स्वाभिमान

और सांस्कृतिक अस्मिता' का विषय था। वे विदेशी पूंजी को केवल आर्थिक नजरिये से नहीं, बल्कि सांस्कृतिक–नैतिक दृष्टिकोण से भी देखते हैं।

*"यदि हमने अपने उत्पादन, भोग, उपभोग और निर्यात को समाज के मूल्यों से अलग कर दिया, तो हम उत्पादन मशीनों के गुलाम बन जाएंगे।'*

आज जब भारत न्यू इंडिया, डिजिटल इंडिया, पंचायती स्वराज और लोकल फॉर वोकल की ओर बढ़ रहा है तो यही सिद्धांत पुनः मुखर हो रहे हैं। आत्मनिर्भर भारत का विचार हो, ग्रामीण पुनरुद्धार की आवश्यकता या सामाजिक समरसता की पुकार – हर पक्ष में एकात्म मानववाद की अनुगूँज सुनाई देती है।

**पंडित दीनदयाल उपाध्याय के राजनीतिक, सामाजिक एवं आर्थिक विचार**

एकात्म मानववाद के दर्शन को साकार रूप तभी दिया जा सकता है जब उसे नीतियों, व्यवस्था, समाज और अर्थव्यवस्था में लागू किया जाए। पंडित दीनदयाल उपाध्याय का चिंतन केवल दार्शनिक नहीं था, बल्कि यह व्यावहारिक भी था। भारतीय राजनीति, समाज और अर्थ व्यवस्था के लिए उन्होंने जो दृष्टिकोण प्रस्तुत किया, वह उस समय के लिए नवाचार से युक्त था, और आज के भारत के लिए प्रेरणास्रोत बना हुआ है।

**राजनीतिक विचार**

पंडित उपाध्याय के अनुसार राजनीति केवल सत्ता प्राप्त करने का माध्यम नहीं होनी चाहिए बल्कि सेवा, त्याग और राष्ट्र के लिए समर्पण का मार्ग होनी चाहिए। उन्होंने राजनीति को एक साधना के रूप में देखा – जिसमें नैतिकता, नेतृत्व और मूल्य महत्वपूर्ण हैं। उन्होंने पश्चिमी राजनीति की तुलना में भारतीय राजनीतिक चिंतन को श्रेष्ठ ठहराया क्योंकि वह नीति और धर्म से जुड़ा हुआ था, जबकि पश्चिम की राजनीति 'सत्ता' का केंद्र बिंदु है।

*''हम सत्ता को पूजा नहीं, साधन मानते हैं – राष्ट्रधर्म की पूर्ति हेतु।'*

उनके ये विचार स्वतंत्र भारत में उस समय आए जब राजनीतिज्ञों ने स्वतंत्रता–संग्राम की विरासत को छोड़कर 'सत्ता केंद्रित राजनीति' को अपना लिया था। उन्होंने इसकी आलोचना की और निष्ठा, चरित्र, राष्ट्रहित व भ्रष्टाचार–मुक्त राज की संकल्पना दी।

यह पंडित उपाध्याय के चिंतन की रीढ़ है। उन्होंने स्पष्ट कहा कि भारत का राष्ट्रभाव केवल संवैधानिक या राजनैतिक नहीं, बल्कि सांस्कृतिक है। हमारे राष्ट्र की आत्मा महर्षियों, संतों, वीरों, कवियों और त्यागी समाज द्वारा निर्मित हुई है। वे कहते हैं कि भारत एक राष्ट्र सदा से है, न कि 15 अगस्त 1947 से। सांस्कृतिक राष्ट्रवाद का अर्थ है – विविधता में एकता, जो सजातीय नहीं, बल्कि सह–भावना से उत्पन्न एकता है। *''हमारी विविधताएं हमारी पहचान हैं, विभाजन नहीं। एकात्मता सांस्कृतिक भाव से आती है, न कि बाहरी नियमों से।'* इस विचारधारा ने भारत को 'राष्ट्र–राज्य' के पश्चिमी विचार से आगे बढ़ाकर एक 'राष्ट्रीय सांस्कृतिक इकाई' के रूप में प्रतिपादित किया। पंडित उपाध्याय ने गहराई से राज्य की संरचना को देखा और कहा कि जब तक सत्ता और साधन केवल राजधानी या नेताओं के पास केंद्रित रहेंगे, तब तक समाज का वंचित वर्ग पिछड़ा रहेगा। वे ग्राम पंचायतों को शासन की मूल इकाई मानते थे। उन्हें लगता था कि शिक्षा, उत्पादन, न्याय और शासन, सब कुछ स्थानीयकृत होना चाहिए ताकि समाज के सभी व्यक्ति उसमें भागीदारी करें। उन्होंने गाँधीजी के 'ग्राम स्वराज' को आधुनिक संदर्भ में व्याख्यायित किया और 'साधन–संपत्ति, निर्णय और दायित्व' को लोगों के पास भेजने की चेष्टा की।

**सामाजिक विचार**

भारतीय समाज में परंपरा, संस्कृति और आध्यात्मिकता की मुख्य भूमिका रही है, किन्तु इसमें कुछ बुराइयाँ जैसे जातिवाद, छुआछूत भी समय के साथ आईं। पंडित उपाध्याय ने इन बुराइयों को सन्तुलित दृष्टि से पहचाना और इन्हें सुधारने का रास्ता सुझाया। उनके अनुसार "वर्ण व्यवस्था" मूलतः कार्य आधारित थी, जन्म आधारित नहीं। वे यह मानते थे कि योग्यता के आधार पर हर व्यक्ति को सम्मान मिलना चाहिए। उन्होंने सामाजिक समरसता का समर्थन किया, जिसमें सबके अधिकार और अवसर समान हों। उन्होंने कहा कि *''जिस समाज में भेद है, वह राष्ट्र नहीं बन सकता। हमें केवल सबको समान भोग देना नहीं, समान बंधुत्व देना है।'*

''अंत्योदय'' का अर्थ है, समाज के सबसे अंतिम व्यक्ति का उत्कर्ष (उद्योग, विकास और अवसर) हो। यह उपाध्याय जी की सबसे मौलिक अवधारणाओं में से एक है। वे भावुक नहीं, बल्कि यथार्थवादी ढंग से सोचते हैं कि जब तक गरीब, दलित, महिला, ग्रामीण और पिछड़ा वर्ग सुविधाओं में भागीदार नहीं होगा, तब तक कोई भी राजनीतिक या आर्थिक नीति सफल नहीं हो सकती। उनका विश्वास था कि *''समाज*

*की प्रतिष्ठा उसकी सबसे कमजोर कड़ी की स्थिति से मापी जानी चाहिए।'* इसलिए उन्होंने 'लोक कल्याणकारी राज्य' से आगे जाकर 'धर्मनिष्ठ लोक राज्य' और 'न्याय आधारित समाज' की संकल्पना दी। पंडित उपाध्याय शिक्षा को केवल ज्ञान नहीं, बल्कि चरित्र निर्माण का साधन मानते थे।
वे कहते थे ''*शिक्षित व्यक्ति वही है जो समाज में उत्तरदायित्वपूर्वक जीवन जीता है।'* उन्होंने महिलाओं की गरिमा, शिक्षा और सामाजिक भूमिका को भारत की सांस्कृतिक भावना के प्रतिबिंब के रूप में देखा।

**आर्थिक विचार**

पंडित उपाध्याय के अनुसार, भारतीय अर्थनीति न तो केवल उत्पादनमुखी हो और न ही सिर्फ वितरणमुखी, बल्कि वह संतुलन और सेवा पर आधारित होनी चाहिए। उनके अनुसार पाश्चात्य पूंजीवाद व्यक्ति को उपभोक्ता बनाता है और समाजवाद व्यक्ति को राज्य का गुलाम, लेकिन भारत की परंपरा कहती है: ''सर्वे भवन्तु सुखिनः''।
उन्होंने कहा कि अर्थनीति :–

- व्यक्ति को उसके श्रम का सम्मान दे,
- प्रकृति का संरक्षण करे,
- संसाधन सीमित निष्पादन हेतु प्रयुक्त हों,
- मुनाफा नहीं "परमार्थ" हो लक्ष्य।
- स्वदेशी और आत्मनिर्भरता

पंडित उपाध्याय का "स्वदेशी" का अर्थ केवल घरेलू उत्पादन और विदेशी वस्तुओं का त्याग नहीं था, बल्कि राष्ट्र के आत्मबल और आत्मगौरव से संबंधित था। कई बार पूछा गया कि भारत यदि आधुनिक तकनीक का उपयोग नहीं करेगा तो कैसे आगे बढ़ेगा? उनका उत्तर था – आधुनिकता को अपनाओ पर अपने मूल्यों के भीतर रहकर, अपने तरीके से– खर्चीली मशीनें नहीं, श्रम उपयोगी तकनीक, रोजगार आधारित उत्पादन, स्थानीय संसाधनों पर आधारित उद्योग, लघु व कुटीर उद्योग, समाज की रीढ़ हैं। उन्होंने भारी उद्योगों पर अत्यधिक निर्भरता को 'आर्थिक असमानता और बेरोजगारी' का कारण बताया। इसके बदले:–

- स्थानीय कारीगरों, ग्रामीण उत्पाद, कुटीर उद्योगों को केंद्र में रखा जाए
- स्वयंसेवी संगठनों, सहकारी समितियों को आर्थिक प्लेटफॉर्म मिले
- श्रमिकों को उत्पादन में भागीदार बनाकर ''उद्योग में सह–स्वामित्व'' हो

*''जब तक भारत का गाँव आत्मनिर्भर नहीं होगा, तब तक भारत दुनिया में आत्मसम्मान से खड़ा नहीं हो सकता।'*

"धर्मराज्य" उपाध्याय जी का आर्थिक दृष्टिकोण से अत्यंत महत्वपूर्ण सिद्धांत है। राज्य का उद्देश्य सिर्फ टैक्स लेना और योजनाएं बनाना नहीं। वह नैतिक प्रेरणा, सामाजिक न्याय और जीवन–मूल्य देने वाला हो। व्यवसाय में नैतिकता, ज्यादा नहीं, जरुरी उत्पादन, उपयोगी उपभोग। ऐसी अर्थव्यवस्था से ही पर्यावरण की रक्षा, मनुष्यता की गरिमा, और समाज का सामूहिक उत्थान हो सकेगा। आज हम जिन विचारों की ओर बढ़ रहे हैं – ''वोकल फॉर लोकल'', ''मुद्रा योजना'', ''जनधन योजना'', ''स्टार्टअप ग्रामों से'', ये सब उनके सिद्धांतों की व्याख्या प्रतीत होते हैं। म्ैळ (म्दअपतवदउमदजए ैवबपंसए ळवअमतदंदबम) नियम, मिशन लाइफ 'सर्कुलर इकोनॉमी', इनमें भी उपाध्याय जी के विचारों की गुंजाइश दिखती है। उनकी संकल्पना अब 'पॉलिसी डॉक्युमेंट्स' में स्थान पा रही है। यह परिवर्तन अत्यंत महत्वपूर्ण है।

**निष्कर्ष**

पंडित दीनदयाल उपाध्याय भले ही 1968 में इस दुनिया से विदा हो गए, लेकिन उनके विचार आज भी देश की राजनीति, आर्थिक नीति, सामाजिक योजना और वैचारिक विमर्श में जीवंत हैं। 21वीं सदी का भारत जब वैश्वीकरण, तकनीकी क्रांति और उभरते उपभोक्तावाद की ओर बढ़ रहा है, तब उपाध्याय जी का एकात्म मानववाद एक संतुलित मार्गदर्शन प्रदान करता है। "अंत्योदय" केवल नारा नहीं, नीति बन चुकी है।
आज भारत की योजनाएँ– जैसे कि:–

- प्रधानमंत्री आवास योजना
- आयुष्मान भारत

ISSN: 2393-8048
International Advance Journal of Engineering, Science and Management (IAJESM)
Multidisciplinary, Multilingual, Indexed, Double Blind, Open Access, Peer-Reviewed, Refereed-International Journal.
SJIF Impact Factor =8.152, July-December 2025, Submitted in August 2025

- उज्ज्वला योजना
- एकलव्य स्कूल
- जनधन योजना

ये सभी योजनाएं ''अंतिम व्यक्ति तक लाभ पहुंचाने'' के सिद्धांत पर आधारित हैं, जिसे उपाध्याय जी ने 1960 के दशक में चिंतन रूप में प्रस्तुत किया था। उनकी विचारधारा ने 'वेलफेयर स्टेट' को 'धर्मराज्य' के उच्च नैतिक धरातल पर स्थापित किया। जिसमें लोक–सेवा केवल सुविधा नहीं, एक आचरण है। पंडित उपाध्याय यह मानते थे कि '*''भारतीयता को अपसंस्कृति या पिछड़ेपन''* की दृष्टि से नहीं देखा जाना चाहिए'। आज 'डांम पद प्दकपंष् ैजंतजनच प्दकपंष् ष्क्पहपजंस प्दकपं' जैसी योजनाएँ न केवल आर्थिक अवसर हैं, बल्कि भारतीय समाज की रचनात्मकता और सांस्कृतिक अस्मिता को जन्म दे रही हैं।

वे कहते थे –*''पश्चिम से प्रेरणा लो, पर आत्मा अपनी रखो। नीति की जड़ें भारत की मिट्टी में हों।'*

पंचायत प्रणाली को सशक्त बनाना, स्थानीय संसाधनों का प्रयोग, जिला स्तर पर बजट आवंटन, गांवों में डिजिटल कनेक्टिविटी, ग्रामीण उद्योगों का सशक्तिकरण। यह सब ''विकेन्द्रीकरण'' की वही प्रक्रिया है, जिसे उपाध्याय 'लोक आधारित शासन प्रणाली' कहते थे। उनका मानना था, राष्ट्र ऊपर से नहीं, जड़ों से सशक्त होता है। पंडित उपाध्याय के दर्शन की शक्ति जितनी है, कुछ समीक्षकों के अनुसार उसमें चुनौतियाँ भी हैं। कुछ लोग उनके ''धर्म'' शब्द को 'थीओक्रेसी', यानी धार्मिक शासन से जोड़ देते हैं, जो गलतफहमी का कारण बनता है। जबकि दीनदयाल जी धर्म को 'कर्तव्य, उत्तरदायित्व एवं नीति' के रूप में परिभाषित करते थे। पंडित जी के विचार ''एक विचारधारा'' के रूप में संगठन विशेष (जैसे संघ या भाजपा) तक सीमित रह गए। विश्वविद्यालय स्तर पर उनका दर्शन, स्वतंत्र अकादमिक विमर्श में वह स्थान अभी तक नहीं पा सका है, जो गांधी, अंबेडकर, लोहिया या मार्क्स को मिला। उनके वांग्मय का तटस्थ पुनर्पाठ होना चाहिए, ताकि युवा पीढ़ी विचारधारा को केवल राजनीतिक औजार न माने, बल्कि समाजशास्त्रीय और आर्थिक मॉडल के रूप में उसे पढ़े। पंडित उपाध्याय हमें स्वदेशी के मूल में ''सांस्कृतिक आत्मनिर्भरता'' की चेतना विकसित करने की बात कहते हैं, केवल विदेशी वस्तु का बहिष्कार नहीं, बल्कि अपनी आर्थिक सोच की भारतीयता को आत्मसात करना। दीनदयाल उपाध्याय के चिंतन में सबसे अद्वितीय बात यह थी कि उन्होंने 'भारत को भारत की दृष्टि से देखने' की कोशिश की, न कि पाश्चात्य चश्मे से।

''यदि किसी राष्ट्र के निर्णय, नीति, शैली और जीवन–पद्धति उसकी परंपरा, संस्कृति और समाज की संरचना के अनुरूप नहीं हैं, तो वह राष्ट्र 'स्वतंत्र दिखाई' जरूर देगा, लेकिन 'आत्महीन' रहेगा।'' उनकी यही बात आज प्रासंगिक हो उठती है, जब भारत अपने मूल में लौटने की कोशिश कर रहा है, आत्मनिर्भर बनने की दिशा में। हमने जो खोया था, संस्कार, ग्राम्य चेतना, वैचारिक मूल्य, जीवन में संतुलन, उसे पुनः प्राप्त करने के लिए आज दीनदयाल उपाध्याय का दर्शन ही प्रकाशस्तंभ बनता है। आधुनिक लोकतंत्र में जहां नैतिकता, पारदर्शिता और सेवा की मांग बढ़ रही है, वहां एकात्म मानववाद एक वैकल्पिक दर्शन बन सकता है, पूंजीवाद और साम्यवाद के मध्य 'भारतीय मार्ग' के रूप में।

**प्रमुख संदर्भ ग्रंथ व लेखन सामग्री**


1. उपाध्याय, द. (1965). एकात्म मानववाद. नई दिल्लीः भारतीय जनसंघ प्रकाशन।
2. उपाध्याय, द. (1988). पंडित दीनदयाल उपाध्यायः चिन्तन और दर्शन. नई दिल्लीः सुरोदय प्रकाशन।
3. मिश्र, र. (2010). पंडित दीनदयाल उपाध्याय का राजनीतिक दर्शन. वाराणसीः भारतीय विचार संस्थान।
4. शर्मा, क. (2015). एकात्म मानववाद की अवधारणा और भारतीय राजनीति. दिल्लीः नवभारत प्रकाशन।
5. जोशी, स. (2012). दीनदयाल उपाध्याय का आर्थिक चिंतन. दिल्लीः विचार विमर्श प्रकाशन।
6. शुक्ला, पी. (2014). एकात्म मानववादः सिद्धांत और व्यवहार. भोपालः भारतीय मंथन।
7. Sharma, R. (2009). Integral Humanism: The Political Philosophy of Deendayal Upadhyaya. New Delhi: Concept Publishing Company.
8. Pandey, G. (2015). The Idea of Bharat: Pandit Deendayal Upadhyaya and Indian Political Thought. New Delhi: Wisdom Tree.